International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

विस्मृत साक्ष्यों का अन्वेषण एवं वैज्ञानिक इतिहास–लेखनः बी.एन. लूणिया की ऐतिहासिक शोध–प्रविधि का मूल्यांकन

राजेंद्र सिंह मेवाडा

(यूजीसी नेट जेआरएफ)

रिसर्च स्कॉलर देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

1. प्रस्तावना

भारतीय इतिहास–लेखन की सुदीर्घ परंपरा में लंबे समय तक इतिहास का निर्माण श्रुतियों, पूर्व–निर्धारित धारणाओं या केवल द्वितीयक साक्ष्यों के आधार पर करने की एक प्रवृत्ति रही है। औपनिवेशिक कालखंड में ब्रिटिश इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास को जानबूझकर खंडित, असंगठित और निरंतर संघर्षमय स्वरूप में प्रस्तुत किया था, ताकि वे अपने शासन को बौद्धिक और ऐतिहासिक रूप से उचित ठहरा सकें। इस कालखंड में कई बार इतिहास–लेखन को राजदरबारों के वृत्तांतों तक सीमित रखा गया या उसे पौराणिक आख्यानों का प्रतिरूप मान लिया गया, जिससे ऐतिहासिक यथार्थ और समाज की वास्तविक स्थिति अक्सर धुंधली हो जाती थी। इस परिप्रेक्ष्य में, प्रख्यात इतिहासकार प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया का अवदान अत्यंत महत्वपूर्ण और दिशा–निर्देशक है। उन्होंने इतिहास–लेखन की इन सीमाओं और औपनिवेशिक पूर्वाग्रहों को भली–भांति पहचाना तथा ऐतिहासिक शोध को कोरी कल्पनाओं से निकालकर उसे वैज्ञानिक, तार्किक एवं साक्ष्य–आधारित धरातल पर स्थापित करने का एक गंभीर और सुविचारित प्रयास किया। प्रोफेसर लूणिया का यह स्पष्ट और अकाट्य मत था कि इतिहास केवल कथा–कहानियों या शासकों की वंशावलियों का विषय नहीं है, बल्कि यह ठोस साक्ष्यों, प्रमाणों और सामाजिक–सांस्कृतिक निरंतरता पर आधारित होना चाहिए। उन्होंने इतिहास–लेखन को केवल पुस्तकीय ज्ञान और द्वितीयक स्रोतों तक सीमित न रखकर, प्राथमिक साक्ष्यों जैसे शिलालेखों, पुरालेखों, सिक्कों, साहित्यिक ग्रंथों और तत्कालीन स्थापत्य कला के वैज्ञानिक अन्वेषण को ही सत्य की खोज का प्रमुख आधार माना। उनकी शोध–दृष्टि इस तथ्य पर केंद्रित थी कि जब तक क्षेत्रीय इतिहास की नींव मजबूत नहीं होगी, तब तक राष्ट्रीय इतिहास का स्वरूप एकांगी ही रहेगा। इसीलिए उन्होंने मालवा और मध्य भारत के इतिहास को स्थानीय साक्ष्यों के माध्यम से राष्ट्रीय पटल पर स्थापित करने का कार्य किया। एक उत्कृष्ट शिक्षक और शोध–निर्देशक के रूप में, उन्होंने अपने विद्यार्थियों और शोधार्थियों को भी निरंतर इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे तथ्यों की पुष्टि के लिए मूल स्रोतों तक पहुँचें और ऐतिहासिक अभिलेखों का बहुआयामी तथा तुलनात्मक परीक्षण करें। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि इतिहास में कल्पना का स्थान न्यूनतम होना चाहिए और प्रत्येक ऐतिहासिक तथ्य की प्रामाणिकता सुनिश्चित की जानी चाहिए। वे किसी भी एक स्रोत पर बिना आलोचनात्मक परीक्षण के विश्वास करने के पक्षधर नहीं थे। उनका मानना था कि वास्तविक और निष्पक्ष निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए विभिन्न पुरातात्विक, अभिलेखीय और साहित्यिक साक्ष्यों का सटीक मिलान तथा उनका सूक्ष्म विश्लेषण नितांत आवश्यक है।

प्रस्तुत शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य प्रोफेसर लूणिया की इसी वैज्ञानिक ऐतिहासिक शोध–प्रविधि का समग्र मूल्यांकन करना है। यह अध्ययन इस बात का विस्तृत विश्लेषण करेगा कि किस प्रकार उन्होंने विस्मृत साक्ष्यों का अन्वेषण कर क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय इतिहास–लेखन को एक प्रामाणिक, वस्तुनिष्ठ और अकादमिक दिशा प्रदान की, जो वर्तमान ऐतिहासिक शोध के लिए भी एक अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी मार्गदर्शक है।

2. विस्मृत अभिलेखों तथा प्राथमिक साक्ष्यों का वैज्ञानिक अन्वेषण

ऐतिहासिक शोध की प्रामाणिकता पूर्णतः उसके प्राथमिक साक्ष्यों की विश्वसनीयता पर निर्भर करती है। प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया ने मालवा तथा मध्य भारत के क्षेत्रीय इतिहास को केवल श्रुतियों या द्वितीयक स्रोतों तक सीमित न रखकर उसे पूर्णतः प्राथमिक और पुरालेखीय साक्ष्यों की ठोस नींव पर स्थापित किया। वर्ष उन्नीस सौ बावन में जब तत्कालीन मध्य भारत सरकार ने स्वतंत्रता संग्राम का प्रामाणिक इतिहास लिखने तथा उसके लिए मूल सामग्री एकत्र करने हेतु एक राज्य स्तरीय इतिहास समिति का गठन किया, तब प्रोफेसर लूणिया की ऐतिहासिक समझ और शोध क्षमता पर गहरा विश्वास व्यक्त करते हुए उन्हें दक्षिणी प्रभाग का अधिकारी नियुक्त किया गया। इस गुरुतर दायित्व को स्वीकार करते हुए उन्होंने ऐतिहासिक साक्ष्यों के संकलन का एक ऐसा भगीरथ प्रयास आरंभ किया, जिसने क्षेत्रीय इतिहास–लेखन को एक सर्वथा नवीन और प्रामाणिक दिशा प्रदान की। एक समर्पित अन्वेषक के रूप में उनके समक्ष सबसे बड़ी चुनौती उन बिखरे हुए और धूल–धूसरित अभिलेखों को खोजना था जो दशकों से विभिन्न रियासतों के तहखानों में उपेक्षित पड़े थे। उन्होंने मध्य भारत में विलीन हो चुके विभिन्न राज्यों, विशेषकर ग्वालियर, इंदौर, देवास, धार और बड़वानी की राजधानियों के सरकारी अभिलेखों की अत्यंत गहन और व्यवस्थित छानबीन की। उनके इस अथक और अनवरत प्रयास के परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में तत्कालीन सरकारी अधिकारियों के पत्र, अदालती मुकदमों के विवरण, दैनिक डायरियां, राज्य सरकारों के गुप्त आदेश, समाचार रिपोर्ट तथा देशी राज्यों के वकीलों के वृत्तांत खोज निकाले गए। इन प्राथमिक साक्ष्यों ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के कालखंड की राजनीतिक, सामाजिक और कूटनीतिक यथार्थता को अत्यंत जीवंत और वास्तविक रूप में अकादमिक जगत के सम्मुख प्रस्तुत किया।

क्षेत्रीय इतिहास–लेखन में भाषाई विविधता और प्राचीन लिपियां अक्सर एक बड़ी बाधा सिद्ध होती हैं। प्रोफेसर लूणिया के इस शोध कार्य में भी एक अत्यंत जटिल समस्या यह थी कि संकलित किया गया अधिकांश पत्राचार, जो मुख्य रूप से होलकर और ग्वालियर राज्य के अभिलेखों का हिस्सा था, वह मराठी भाषा और विशेष रूप से 'मोड़ी लिपि' में लिखा गया था। इतिहास को व्यापक पाठक वर्ग और भविष्य के शोधार्थियों के लिए सुलभ बनाने हेतु प्रोफेसर लूणिया ने विशेषज्ञों के माध्यम से इन मोड़ी लिपि के दस्तावेजों का अत्यंत सावधानीपूर्वक अनुवाद करवाया। इसके अतिरिक्त, निमाड़ क्षेत्र में हुए विद्रोह से संबंधित अत्यंत महत्वपूर्ण पत्राचार उन्होंने नागपुर के सरकारी अभिलेखों से खोज निकाला। इस संपूर्ण शोध–प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि एक निष्पक्ष और वैज्ञानिक शोधकर्ता के रूप में उन्होंने दस्तावेजों के मूल स्वरूप के साथ तनिक भी छेड़छाड़ नहीं की। जिन ऐतिहासिक पत्रों में तिथि या लेखक का नाम अज्ञात था, उन्हें भी उनके अंतर्निहित ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए यथावत प्रकाशित किया गया। उन दस्तावेजों की पृष्ठभूमि और उनके महत्व को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने अपनी ओर से केवल व्याख्यात्मक टिप्पणियां जोड़ीं। अभिलेखों के प्रति यह

संवेदनशीलता और कार्यप्रणाली उनकी उच्च स्तरीय अकादमिक ईमानदारी तथा ऐतिहासिक साक्ष्यों के प्रति उनके गहरे सम्मान को प्रमाणित करती है, जो वैज्ञानिक इतिहास–लेखन की सबसे अनिवार्य शर्त है।

3. ऐतिहासिक शोध–प्रविधि में वैज्ञानिकता एवं अकादमिक अनुशासन

प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया की ऐतिहासिक शोध–प्रविधि केवल साक्ष्यों के एकत्रीकरण तक सीमित नहीं थी, अपितु उसमें उन साक्ष्यों के वैज्ञानिक विश्लेषण और अकादमिक अनुशासन का अत्यंत प्रखर समावेश था। उन्होंने इतिहास–लेखन में 'कार्य और कारण' के शाश्वत सिद्धांत को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करते हुए तथ्यहीन कल्पनाओं को सिरे से खारिज कर दिया। शोध–कार्यों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने हेतु उन्होंने पाद–टिप्पणियों और संदर्भ–ग्रंथों के सटीक उपयोग को अनिवार्य बनाया तथा अपने शोधार्थियों को स्पष्ट निर्देश दिया कि प्रत्येक ऐतिहासिक तथ्य का सप्रमाण होना अनिवार्य है। उनकी इस वैज्ञानिक कार्यप्रणाली का सबसे प्रामाणिक और उत्कृष्ट उदाहरण वर्ष उन्नीस सौ सत्तावन में मध्य प्रदेश शासन के शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित उनका ग्रंथ 'फेजेस ऑफ फ्रीडम स्ट्रगल इन मध्य भारत अठारह सौ सत्तावन' है।

अकादमिक अनुशासन के अंतर्गत उन्होंने ऐतिहासिक दावों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने हेतु शोध–प्रबंधों में पाद–टिप्पणियों तथा संदर्भों के उपयोग को अत्यंत कठोरता से लागू किया। शोधार्थियों को उत्कृष्ट अध्ययन सामग्री सुलभ कराने के उद्देश्य से उन्होंने इतिहास विभाग में सत्तर अलमारियों का एक विशाल पुस्तकालय स्थापित करवाया। इस पुस्तकालय में दुर्लभ संदर्भ–ग्रंथों के साथ–साथ ब्रिटिश संसदीय बहसों के प्रामाणिक दस्तावेज भी मँगवाए गए, ताकि विद्यार्थी विभिन्न दृष्टिकोणों का तुलनात्मक अध्ययन कर सकें। यह कदम उनकी उस वैज्ञानिक सोच का परिचायक था, जहाँ वे शोधार्थी को मात्र व्याख्यानों पर निर्भर रहने से बचाकर उसे स्वाध्याय तथा मूल संदर्भों के प्रत्यक्ष परीक्षण हेतु सक्षम बनाना चाहते थे। इस सैद्धांतिक और व्यावहारिक शोध–प्रविधि को संस्थागत रूप देने के लिए उन्होंने इतिहास विभाग में सत्तर अलमारियों का एक विशाल पुस्तकालय स्थापित करवाया। उनका उद्देश्य था कि विद्यार्थी केवल व्याख्यानों पर निर्भर रहने के बजाय मूल संदर्भों का स्वयं प्रत्यक्ष परीक्षण कर सकें। लूणिया जी का यह अकादमिक अनुशासन उनके व्यक्तिगत जीवन की दिनचर्या में भी परिलक्षित होता था। एक शोधकर्ता के रूप में वे प्रतिदिन प्रातः पाँच बजे से सात बजे तक अनिवार्य रूप से ऐतिहासिक लेखन का कार्य करते थे। इसी कठोर वैचारिक साधना के परिणामस्वरूप उन्होंने प्राचीन एवं आधुनिक भारतीय इतिहास पर दर्जनों मानक ग्रंथों की रचना की। उनकी इसी साक्ष्य–आधारित कार्यप्रणाली ने मध्य प्रदेश के अकादमिक जगत में एक ऐसी वैज्ञानिक शोध–परंपरा की नींव रखी, जहाँ इतिहास को एक विश्लेषणात्मक विज्ञान के रूप में स्थापित कर दिया गया।

4. ऐतिहासिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं निष्पक्ष मूल्यांकन

एक प्रामाणिक इतिहासकार की सबसे बड़ी पहचान उसकी वस्तुनिष्ठता और निष्पक्षता होती है। क्षेत्रीय इतिहास लिखते समय प्रायः इतिहासकारों में स्थानीय शासकों के प्रति मोह या उनके अंध–महिमामंडन की प्रवृत्ति देखने को मिलती है, परंतु प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया इस वैचारिक दुर्बलता से पूर्णतः मुक्त थे। उनकी यह तटस्थता अठारह सौ सत्तावन ईस्वी के महासंग्राम की प्रकृति के मूल्यांकन में अत्यंत स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। उन्होंने इस ऐतिहासिक घटना

पर अपना कोई एकतरफा निर्णय थोपने के बजाय, साक्ष्यों के आधार पर दोनों पक्षों के तर्कों का अत्यंत संतुलित विश्लेषण प्रस्तुत किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि यद्यपि इस विद्रोह में अखिल भारतीय नेतृत्व का अभाव था तथा इसमें सामंती वर्गों के व्यक्तिगत हित जुड़े थे, तथापि इसे केवल सिपाहियों की बगावत कहकर खारिज नहीं किया जा सकता। उनकी इस ऐतिहासिक वस्तुनिष्ठता का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण महाराजा तुकोजीराव होलकर द्वितीय की भूमिका का बेबाक और यथार्थवादी विश्लेषण है। तत्कालीन परिस्थितियों की जटिलता को उकेरते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि महाराजा की नीति 'द्वैत' पर आधारित थी। अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर उन्होंने यह प्रमाणित किया कि जहाँ महाराजा एक ओर अंग्रेजों के प्रति वफादारी का दिखावा कर रहे थे, वहीं परोक्ष रूप से वे सआदत खान जैसे विद्रोहियों को अपने महल में शरण तथा सम्मान प्रदान कर उनका उत्साहवर्धन भी कर रहे थे। किसी भी प्रकार के राजकीय प्रभाव या महिमामंडन से ऊपर उठकर सत्य का यह निर्भीक अन्वेषण उनके एक तटस्थ इतिहासकार होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। एक निष्पक्ष अन्वेषक की भाँति उन्होंने केवल गौरवगाथाएं ही नहीं लिखीं, अपितु विद्रोहियों की विफलताओं के कारणों पर भी निर्भीकता से प्रकाश डाला। उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि विद्रोहियों के पास किसी केंद्रीय समन्वयकारी संस्था, कुशल नेतृत्व एवं सुनियोजित सैन्य रणनीति का घोर अभाव था। इसी नेतृत्वहीनता के कारण कुछ अराजक तत्वों ने लूटपाट का सहारा लिया, जिससे विद्रोह का मूल उद्देश्य कलंकित हुआ और आम जनता की सहानुभूति उनसे दूर होने लगी। इसके समानांतर, उन्होंने ब्रिटिश सेना तथा लेफ्टिनेंट कर्नल एच.एम. डूरंड द्वारा किए गए अमानवीय अत्याचारों, सामूहिक हत्याकांडों और फाँसी की घटनाओं को भी अपनी रचनाओं में पूरी प्रमुखता से दर्ज किया। ऐतिहासिक घटनाओं के उजले और स्याह, दोनों पक्षों का यह तटस्थ विवरण उनकी ऐतिहासिक शोध–प्रविधि को अत्यंत वस्तुनिष्ठ और अकादमिक रूप से परिपक्व सिद्ध करता है।

5. इतिहास–लेखन का लोकतांत्रिक स्वरूप एवं उपाश्रित वर्गों का समावेश

प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया ने इतिहास–लेखन की उस परंपरागत और संभ्रांतवादी परिपाटी को पूरी तरह से निरस्त कर दिया, जिसमें इतिहास को केवल राजवंशों, राजमहलों के षड्यंत्रों, संधियों और युद्धों की कथा माना जाता था। उनके ऐतिहासिक दर्शन के अनुसार, किसी भी महान राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके शासक वर्ग में नहीं, बल्कि जनसमुदाय के चरित्र, कार्यसंस्कृति और उसकी सभ्यतागत निरंतरता में निवास करती है। उन्होंने इतिहास के विषय–क्षेत्र का पूर्णतः लोकतंत्रीकरण करते हुए उसका केंद्र 'राजा' से हटाकर 'समाज' को बना दिया। उनका यह स्पष्ट मानना था कि हाशिए पर छूट गई सामाजिक संरचना, जनजीवन की समस्याएं, सांस्कृतिक परंपराएं और आर्थिक गतिविधियां ही किसी सभ्यता के वास्तविक इतिहास का निर्माण करती हैं। उन्होंने इतिहास को सत्ता के ऊंचे महलों से निकालकर आम समाज और संस्कृति के खुले प्रांगण में ला खड़ा किया, जिससे इतिहास–लेखन अधिक समावेशी और यथार्थवादी बन सका।

आधुनिक इतिहास–लेखन में जिसे 'उपाश्रित इतिहास' (नीचे से ऊपर का इतिहास) कहा जाता है, प्रोफेसर लूणिया ने उसे दशकों पूर्व ही अपने शोध का अभिन्न अंग बना लिया था। उन्होंने उन वर्गों दलित, वंचित, पिछड़े और उपेक्षित जनसमुदायों के प्रति गहरी ऐतिहासिक संवेदनशीलता प्रदर्शित की, जिन्हें मुख्यधारा के इतिहासकारों ने प्रायः हाशिए पर छोड़ दिया था। अठारह सौ सत्तावन के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के क्षेत्रीय अध्ययन में उन्होंने स्पष्ट रूप से यह स्थापित किया कि यह संग्राम केवल महलों या सैन्य छावनियों तक सीमित नहीं था। उन्होंने ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर प्रमाणित किया कि

मालवा और निमाड़ के वनों में निवास करने वाली भील, भिलाला, नायक और भामर जैसी जनजातियों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता को अत्यंत कड़ी चुनौती दी थी। उन्होंने बंजारों द्वारा विद्रोहियों को रसद पहुँचाने और आम ग्रामीण जनता के परोक्ष समर्थन जैसे विस्मृत तथ्यों को मुख्यधारा के इतिहास में स्थान दिलाकर उसे एक व्यापक 'जन–आंदोलन' सिद्ध किया। उनके इस जन–केंद्रित इतिहास–बोध में मालवा की साझी सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक यथार्थ का भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने महिलाओं की तत्कालीन स्थिति का यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत करते हुए महिला शिक्षा, समान अधिकार और सामाजिक सम्मान को राष्ट्र–निर्माण की अनिवार्य शर्त माना। उनका यह प्रगतिशील दृष्टिकोण प्रमाणित करता है कि लूणिया जी का इतिहास–लेखन राष्ट्रवादी होते हुए भी एक 'जनकेंद्रित' दिशा लेता है, जहाँ अर्थव्यवस्था (कृषि, व्यापार, श्रम), संस्कृति (कला, भाषा, परंपरा) और सामाजिक सुधार राष्ट्रीय पहचान की निर्मिति में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। अपनी इसी लोकतांत्रिक ऐतिहासिक दृष्टि के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया कि राष्ट्र का इतिहास किसी एक वर्ग की जागीर नहीं है, अपितु यह संपूर्ण समाज के सामूहिक संघर्षों और उपलब्धियों का प्रतिबिंब है।

6. निष्कर्ष

उपर्युक्त विस्तृत एवं साक्ष्य–आधारित विवेचन के आधार पर यह तार्किक निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा सकता है कि प्रोफेसर भंवरलाल नाथूराम लूणिया की ऐतिहासिक शोध–प्रविधि ने क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय इतिहास–लेखन को एक अत्यंत प्रामाणिक और वैज्ञानिक आधार प्रदान किया। उन्होंने इतिहास को किंवदंतियों, औपनिवेशिक पूर्वाग्रहों तथा केवल पुस्तकीय ज्ञान के सीमित दायरे से बाहर निकालकर उसे प्राथमिक अभिलेखों, पुरातात्विक साक्ष्यों और विश्लेषणात्मक तर्क की कसौटी पर कसा। एक निष्पक्ष और तटस्थ अन्वेषक के रूप में उनकी कार्यप्रणाली विशेषकर विस्मृत और दुर्लभ दस्तावेजों का अन्वेषण, मूल साक्ष्यों का बिना किसी छेड़छाड़ के संपादन तथा ऐतिहासिक घटनाओं का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन अकादमिक शोध के सर्वोच्च मानदंडों का प्रतिनिधित्व करती है।

इतिहास–लेखन में 'कार्य–कारण' सिद्धांत का कठोरता से पालन और समाज के उपेक्षित एवं हाशिए पर स्थित जनजातीय तथा सामान्य वर्गों के ऐतिहासिक योगदान को मुख्यधारा में शामिल करने का उनका दृष्टिकोण उनके अकादमिक विजन की व्यापकता को सिद्ध करता है। उन्होंने मध्य प्रदेश के अकादमिक जगत में साक्ष्य–आधारित शोध की जिस संस्थागत और तार्किक परंपरा की नींव रखी, वह वर्तमान इतिहासकारों और भावी शोधार्थियों के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा दिशा–निर्देशक धरोहर है। अंततः, प्रोफेसर लूणिया की शोध–प्रविधि यह शाश्वत रूप से प्रमाणित करती है कि केवल प्रामाणिक, निष्पक्ष और सत्यनिष्ठ इतिहास–लेखन ही एक सशक्त, जागरूक और स्वाभिमानी राष्ट्र के निर्माण का मूल आधार बन सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- लूणिया, बी. एन. 'आधुनिक भारतः जन–जीवन और संस्कृति', कमल प्रकाशन, इंदौर, 1993
- लूणिया, बी. एन. 'प्राचीन भारतीय संस्कृति, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, 2002
- लूणिया, बी. एन. 'भारत में ब्रिटिश साम्राज्य', कमल प्रकाशन, इंदौर, 1986
- लूणिया, बी. एन. 'भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास', लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 1966
- लूणिया, बी. एन. 'मध्य भारत में विद्रोह (1857)'. स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश शासन, 2004
- उपाध्याय जगदीश चंद्र, 'मालवा के इतिहास के कुछ पहलू'. राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, 2020
- उपाध्याय, जे. सी. (प्रो. बी.एन. लूणिया के शिष्य), व्यक्तिगत साक्षात्कार साक्षात्कारकर्ता : राजेंद्र सिंह मेवाड़ा, डॉ. उपाध्याय का निवास स्थान, इंदौर, 25 जनवरी 2026
- लूणिया, वीरेंद्र (बी.एन. लूणिया के पुत्र), व्यक्तिगत साक्षात्कार साक्षात्कारकर्ता : राजेंद्र सिंह मेवाड़ा, मालव शिशु विहार विद्यालय, इंदौर, 5 नवंबर 2025
- लूणिया, बी. एन. 'मध्ययुगीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास (1206 से 1761 तक)1989
- *Luniya, B. N. Some Historians of Medieval India. Lakshmi Narain Agarwal, Agra, 1969*
- *Bhatt, S. K., editor. "Cities, Towns and Republics in Ancient and Medieval India." Journal of the Academy of Indian Numismatics & Sigillography, vol. VII–VIII, 1989–1990.*
- *Bhatt, S. K., editor. Studies in the History of Malwa. Indore, 1985.*
- *Dictionary of Martyrs: India's Freedom Struggle (1857–1947). Vol. 3, Indian Council of Historical Research and Ministry of Culture, Government of India, 2013.*
- *Luniya, B. N., editor. Journal of the Academy of Indian Numismatics & Sigillography, 1974-1975.*
- *Luniya, B. N., editor. Phases of Freedom-Struggle in Madhya Bharat 1857. The Education Department, Government of Madhya Pradesh, 1957.*
- *Luniya, B. N. "A Phase of Freedom Struggle in Nimar 1857-59." Proceedings of the Indian History Congress, 1965.*
- *Luniya, B. N. "Dharmarajeswar or Dhamnar and Other Caves." Proceedings of the Indian History Congress, 15th Session, Gwalior, 1952.*

- *Luniya, B. N. "Freedom Movement in Malwa." Dictionary of Martyrs: India's Freedom Struggle (1857–1947), Indian Council of Historical Research, 1957.*
- *Luniya, B. N. "Mahidpur in 1857." Proceedings of the Indian History Congress, 20th Session, Vallabh Vidyanagar, 1957.*
- *Luniya, B. N. "Raja Bakhtawar Singh of Amjhera and The War of 1857." The Vikram (Journal of Vikram University, Ujjain), vol. I, no. 2, May 1957.*
- *Luniya, B. N. "The Siege of Dhar (Oct. 1857)." Proceedings of the Indian History Congress, vol. 19, 1956.*
- *Luniya, B. N. Yug Yugeen Dhar (Dhar Through Ages). History Association, Govt. College, Dhar, 1964.*